JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बूढ़ी दिवाली के संबंध में धार्मिक इतिहास

Budhi Diwali ke Smabandh mein Dharmik Itihas

अमृतांजली शर्मा

शोधार्थी, संगीत विभाग

अकाल कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड सोषल साइंसेज

इटरनल यूनिवर्सिटी

बड़ू साहिब हिमाचल प्रदेष – 173101

भूमिका :–

हमारा देश भारत अनेक धर्मों को मानने वाला देश है और सभी धर्मों के लोग यहाँ पूरी आज़ादी के साथ अपने अलग–2 त्यौहारों को पूरे हर्षोल्लास के साथ मानते हैं। हिंदू धर्म जो कि भारत में सबसे अधिक लोगों का धर्म है, का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण त्यौहार है दीपावली।

इस विषय में हम सभी जानते हैं कि त्रेता युग में भगवान श्रीराम अपने 14 वर्षों के वनवास को पूरा करने के बाद जब अयोध्या वापस लौटे थे तो सभी अयोध्या वासियों ने उनके स्वागत में घर–2 दीप जलाकर उत्सव मनाया था ।

त्रेता युग से लेकर आज तक हिंदू धर्म को मानने वाले सभी लोगों के साथ–2 अन्य भारतवासी चाहे वे दुनियाँ में कहीं भी रहते हों, इस त्यौहार को पूरे हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं।

बूढ़ी दिवाली :–

हिमाचल प्रदेश के अन्य भागों की तरह जिला सिरमौर में भी दीपावली यह त्यौहार धूम–धाम से मनाया जाता है। परंतु हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिला में गिरी पार के कुछ क्षेत्रों में विशेषकर शिलाई के क्षेत्र में बूढ़ी दिवाली भी मनाई जाती है। नई दिवाली के ठीक एक मास के बाद बूढ़ी दिवाली मनाई जाती जाती है। इस संदर्भ में लोगों के अपने अपने तर्क हैं। कुछ लोग कहते हैं कि इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों को भगवान श्रीराम जी के वनवास से लौट आने का समाचार काफ़ी बाद में पता लगा इसलिए यह दीपावली एक मास के बाद मनाई जाती है। परंतु इस बारे में बहुत कम लोगों को ही पता है कि वास्तव में बूढ़ी दिवाली सतयुग के समय से चली आ रही है ।

श्रीमदभागवत में इस घटना की कथा का वर्णन है कि जब वृतासुर का अत्याचार चरम पर था और उसके अत्याचार की कोई सीमा नहीं रही तो देवता लोग ब्रह्म जी के पास गये और ब्रह्म जी ने कहा कि इस दुराचारी का वध महर्षि दधिची जी के अस्थिपिंजर से बने अस्त्र से ही संभव हो पाएगा। सभी देवता इंद्र जी की अध्यक्षता में महर्षि दधीचि जी के पास गये और उनके समक्ष अपना प्रश्न रखा और कहा कि कृपया आप हमारी रक्षा करें, हम आपसे आपके प्राणों की भिक्षा मांगते हैं। आप हमें अपना अस्थिपिंजर देने की कृपा करें जिससे हम दिव्यास्त्र का निर्माण करके अत्याचारी वृतासुर का वध करने में सफल हो सके। परम परोपकारी महर्षि दधीचि जी ने तत्काल अपने प्राणों को योग बल के द्वारा त्यागा और प्राणत्याग से पहले अपने शरीर पर आटे का लेप किया। जब ऋषि महाराज ने अपने प्राण त्याग दिए तो उसके बाद

गायों ने उनके शरीर को चाटा और इसके बाद उनके शरीर का मात्र अस्थिपिंजर शेष रह गया। देवताओं ने उस अस्थिपिंजर का दिव्यास्त्र बनाकर वृत्तासुर पर आक्रमण किया और वृत्तासुर का वध उत्तराखंड की हिमाचल के साथ लगती पहाड़ियों के ऊपर हुआ। इसी बात से प्रसंन होकर लोगों ने मार्गशीर्ष की अमावस्या के दिन मोटी मोटी लकड़ियों को जला कर अग्निकुंड के चारों तरफ आग की मशाले लेकर नाचना शुरु किया और इसको एक उत्सव के रुप में मनाया लोगों की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। तभी से इस पर्व को बूढ़ी दीपावली के पर्व के रूप में मनाया जाता है। वास्तव में बूढ़ी दीपावली के पर्व को भी नई दीपावली की तरह ही मनाया जाता है,

इस पर्व में भी छोटी अमावस के दिन मशाले जलाई जाती है और लोग नाचते हुए गांव से बाहर जाते हैं बड़ी अमावस के दिन भारी संख्या में लोग एकत्रित होते हैं। मोटी–मोटी लकड़ियों को इकट्ठा करके रात को अग्नि जलाते हैं और मशालें जलाकर ढोल नगाड़े की ताल पर नाचते हुए गांव से बाहर जाते हैं ।

उसी प्रकार उस रात्रि की ब्रह्म बेला में प्रातः काल मशाल जलाकर लोग झुंड में गांव से बाहर जाते हैं और वाद्ययंत्रों की थाप पर नाचते हैं। वापस लौटकर देवालय के समीप सियारानी की गाथा गाई जाती है और

सियारानी की गाथा के बाद कुंता देवी की गाथा को भी गाया जाता है जो कि रामायण तथा महाभारत से संबंध रखते हैं।

अगले दिन प्रतिपदा के दिन भीउरी की गाथा गाई जाती है जो दिवाली के उत्सव पर नहीं पहुंच पाई थी । उसकी मां ने बेलवा नाम के एक व्यक्ति को भेजा कि मेरी पुत्री को भी इस उत्सव में बुलाया जाए परंतु उस व्यक्ति ने उस लड़की के साथ दुराचार किया और उसका वध किया, जिसके बाद इस गाथा को विशेष करके गांव की लड़कियां गाती है। तदोपरांत दिन के उत्सव की शुरुआत होती है जिसमें हारुल रासा और गीत गाना होता है। बीच–बीच में लोगों के मनोरंजन के लिए हास्यप्रद लघु नाटिका भी पेश की जाती है। अगले दिन को स्थानीय भाषा में जोंदोई कहते हैं और उस दिन बूढ़ी दिवाली का समापन होता है।

बूढ़ी दिवाली में भी नई दिवाली की तरह मुड़ा तैयार किया जाता है मुड़ा लड़कियों के यहां भेजा जाता है और भीउरी गाथा को गाते समय गाँव के सभी लोग अपने–अपने घरों से मुड़ा लाकर लड़कियों के लिए किसी बड़े बर्तन में एकत्रित करते हैं और लड़कियां उसको आपस में बांटती है।

यह प्रथा सदियों से चली आ रही है। इसे बूढ़ी दिवाली इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह रामायण काल (त्रेता युग) से भी पहले की घटना है अर्थात सतयुग की घटना है। नई दिवाली से पुरानी होने के कारण इसे बूढ़ी दिवाली कहा जाता है और इस पर्व में वीर गाथा के गीत गाए जाते हैं। वहीं पर भीउरी एक करुणा रस से भरी गाथा है। यह परंपरा आगे भी चलती रहे ऐसा मेरा नई पीढ़ी से अनुरोध है। आशा करती हूं कि नई पीढ़ी इस परंपरा को सदैव बना कर रखेंगे।

सारांश :–

इस क्षेत्र की संस्कृति अपने आप में बेजोड़ है। देश और प्रदेश के अन्य भागों की तरह सभी त्यौहार यहाँ भी मनाये जाते हैं लेकिन बूढ़ी दिवाली का महत्व कुछ अलग ही है। इसको मनाने के सन्दर्भ में भले ही अलग–2 मत सामने आते हों, परन्तु वास्तविकता यही है कि सदियों के चली आ रही यह परम्परा आज भी बदस्तूर कायम है और इस त्यौहार में लोगों की रुचि समय बीतने के साथ भी कम नहीं हुई है। आशा है कि हमारी संस्कृति की यह खूबसूरती हमेशा बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1 "मैं हूं सिरमौर", पवन बक्शी।

2 "गिरि पार का हाटी समुदाय" पवन बक्शी।

3 "सिरमौरी लोक साहित्य", गौतम खुशी राम।